गुरु अर्जन देव जी
(1563–1606, गुरगद्दी 1581–1606)

गुरु अर्जन देव जी का जन्म अमृतसर के एक छोटे नगर गोइंदवाल में 15 अप्रैल 1563 को हुआ। वह गुरु रामदास जी और बीबी भानी जी के सबसे छोटे सुपुत्र थे। बचपन में एक दिन वह गुरु अमरदास जी के पलंग की ओर रेंगते–रेंगते आ पहुँचे। गुरु जी उस समय आराम कर रहे थे। माता भानी दौड़ी आईं, बच्चे को उठाकर ले जाने के लिए ताकि वह गुरु जी के आराम में खलल न डाले। पर बच्चे ने उससे पहले ही गुरु जी को जगा दिया था। उन्होंने कहा, "आने दो मेरे पास, यह मेरा दोहता बाणी का बोहिथा होगा।" (मनुष्य जाति को संसार–सागर से पार करने वाला जहाज)।

गुरु अर्जन देव जी का विवाह जालंधर जिले में फिल्लौर के निकट एक गाँव मिउ के निवासी किशन चंद की सुपुत्री बीबी गंगा के साथ हुआ। यह विवाह 1589 में हुआ, जब गुरु जी लगभग 26 वर्ष के थे। गुरु रामदास जी ने दो सरोवर– संतोखसर और अमृतसर खुदवाने आरंभ किए और रामदासपुर नगर की नींव रखी। अपने पिता के बाद गुरु अर्जन देव जी ने दोनों सरोवरों को पूरा करने तथा नगर को बसाने का कार्य संभाल लिया। वह प्रतिदिन जाकर किए जा रहे कामों की निगरानी करते थे।

मसन्द प्रथा :

गुरु नानक जी ने अपनी उदासियों (यात्राओं) के दौरान पूरे देश में कई स्थानों पर संगतें स्थापित की थीं। सिखों के गुरु जी के दर्शन करने के लिए निरन्तर आने से संगतों का केन्द्र के साथ सम्बन्ध बना रहता था। गुरु अमरदास जी के समय प्रचार का काम अधिक नियमबद्ध और विधि अनुसार होने लगा। उन्होंने सिक्खी के इस आध्यात्मिक राज्य को बाईस 'मंजियों' में बांट दिया। गुरु रामदास जी ने प्रचारकों के एक नये प्रबंध का केन्द्र–बिन्दु मसन्दों के नाम से स्थापित किया। 'मसन्द' शब्द लगता है 'मस–नद' से निकला जो 'मसनदी–अली' अर्थात (His Excellency)(सर्वोत्तम श्रीमान) का संक्षिप्त रूप था। यह पदवी मुगल राज्य के गवर्नरों के लिए प्रयोग में लाई जाती थी। इस नये प्रबंध का मनोरथ सिख धर्म का प्रसार तेज गति से करना और रामदासपुर के सरोवरों और नगर के निर्माण के लिए धन एकत्र करना था। गुरु अर्जन देव जी ने मसन्दों का नये सिरे से प्रबंध किया। उन्होंने नये ईमानदार और सुहृदय मसन्द नियुक्त किए, जो सिखों के सांसारिक और आध्यात्मिक, दोनों तरह के मामलों में सहायता किया करते। मसन्द सिखों से 'दसवंध'(आमदनी का दसवाँ हिस्सा) भी इकट्ठा करते, जिसे गुरु की गोलक में सिख–मंदिरों के रख–रखाव और देखभाल के लिए डाला जाता था।

कई लेखकों का विचार है कि दसवंध जबरन लिया जाता था। दसवंध कभी भी जबरन इकट्ठा नहीं किया जाता था, न ही कोई टैक्स समझा जाता था। जो कुछ भी सिख भेंट करते थे, या आजकल भी करते हैं, वह पूरी तरह अपनी इच्छा, प्रेम और श्रद्धा से होता था।

मसन्दों को हर वर्ष वैशाखी के अवसर पर अमृतसर में आकर गुरु जी से आदेश लेना और एकत्र किया गया सारा दसवंध देकर जाना होता था। इन भेंटों का बाकायदा हिसाब रखा जाता था और रसीदें दी जाती थीं।

रुपये–पैसे की सेवा से अलग मसन्द शक्तिशाली प्रचारक भी थे। सिक्खी में प्रवेश करने के लिए प्रामाणिक 'चरणामृत' वह था, जिसे गुरु जी स्वयं प्रदान करते थे। पर क्योंकि गुरु जी के लिए शारीरिक तौर पर हर स्थान पर होना संभव नहीं था, इसलिए हरेक स्थान पर मसन्दों को यह अधिकार दिया गया था कि सिख संगत में नये सिखों के प्रवेश के लिए मसन्द स्वयं ही प्रचलित विधि के अनुसार चरणामृत तैयार करके दिया करें। इसने श्रद्धालुओं की बहुत बड़ी संख्या को सिक्खी धारण करने के लिए आकर्षित किया। गुरु अर्जन देव जी के समय भारत में ऐसा स्थान कम ही था, जहाँ गुरसिख न हों। मसन्दों ने देश के कोने–कोने में सिख धर्म का प्रचार करने के लिए बड़ी कड़ी मेहनत की।

निर्माण कार्यों का सम्पूर्ण होना :

गुरु जी ने संतोखसर और अमृतसर सरोवरों की खुदाई का शेष बचा कार्य पूरा किया। भाई बुड्ढ़ा जी को सबसे अधिक भरोसेमंद गुरसिख होने के कारण, निर्माण कार्यों की निगरानी करने के लिए नियुक्त किया गया था। संतोखसर 1587–89 में पूरा हुआ। अमृत के सरोवर का काम पूरा होने पर गुरु जी ने हरिमंदर की नींव सरोवर के केन्द्र में रखी। इस हरिमंदर को आजकल अंग्रेजी में 'गोल्डन टेम्पल' यानी 'स्वर्ण मंदिर' कहा जाता है। कहा जाता है कि सिखों ने गुरु जी के सम्मुख इच्छा प्रकट की कि हरिमंदर का भवन आसपास की इमारतों में सबसे अधिक ऊँचा होना चाहिए। गुरु जी ने समझाया कि "हरिमंदर सबसे नीचा होना चाहिए, क्योंकि जो झुकता है, वही ऊपर उठता है। एक वृक्ष जितना अधिक फल से भरा होगा, उतना ही अधिक उसकी टहनियाँ धरती की ओर झुकेंगीं।"

मीआं मीर, एक प्रसिद्ध मुसलमान महात्मा, गुरु जी का मित्र और श्रद्धालू था। गुरु जी ने उसको हरिमंदर की नींव रखने के लिए कहा। इस तरह, हरिमंदर की नींव मीआं मीर ने जनवरी 1589 में रखी। प्रधान राजमिस्त्री ने नींव वाली ईंट ठीक स्थान पर करने के लिए कुछ सरका दी। इस पर गुरु जी ने भविष्यवाणी की, "क्योंकि राज मिस्त्री ने नींव की ईंट अपनी जगह से हिला दी है, हरिमंदर की नींव की ईंट आने वाले समय में फिर से रखी जाएगी।" गुरु जी की यह भविष्यवाणी तब पूरी हुई, जब अहमद शाह अब्दाली ने 1763 में हरिमंदर गिरा दिया और सरोवर का अपमान किया था। लेकिन, दो वर्ष के बाद खालसा की महान फौजों ने हरिमंदिर पर अपना कब्जा कर लिया और हरिमंदर की नींव दूसरी वार रखी गई और निर्माण कार्य शुरू किया गया।

हिंदू मंदिर तीन तरफ से बन्द होते हैं और उनमें जाने के लिए आम तौर पर पूरब दिशा की ओर से द्वार होता है, जबकि मुसलमानों की मस्जिदों में प्रवेश–द्वार पश्चिम की ओर हुआ करते हैं। सिखों के पवित्र स्थान हरिमंदर के चारों ओर ही अन्दर आने के लिए दरवाजे थे। इसका अर्थ था कि अकाल पुरुख सब तरफ है और दूसरा, दरवाजे चारों दिशाओं (पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण) में होने का अर्थ यह था कि चारों जातियों के लोग बराबर तौर पर हरिमंदर में जा सकते हैं। जब हिंदुओं के मंदिरों में केवल चुनी हुई श्रेणियों के लोग ही जा सकते थे, हरिमंदर सबके लिए खुला है, जो भी प्रभु–भक्ति करना चाहता है, जा सकता है। मुस्लिम मस्जिदें केवल मुसलमान पुरुषों के लिए खुली थीं, पर हरिमंदर में सब पुरुष, स्त्रियाँ और बच्चे, बिना जात, मत, नस्ल, रंग, धर्म या कौम के भेदभाव के जा सकते थे। हरिमंदर के अन्दर (गुरु) ग्रंथ साहिब की स्थापना की गई।

जब सरोवर और हरिमंदर का कार्य सम्पूर्ण हुआ, तो गुरु अर्जन देव जी ने यह 'शबद' उच्चारित किया :

"विचि करता पुरखु खलोआ। वालु न विंगा होआ।
मजनु गुर आंदा रासे। जपि हरि हरि किलविख नासे।
संतहु रामदास सरोवरु नीका।
जो नावै सो कुलु तरावै उधारु होआ है जी का। रहाउ।
जैजैकारु जगु गावै। मनि चिंदिअड़े फल पावै।
सही सलामति नाइ आए। अपण प्रभु धिआए।
संत सरोवर नावै। सो जनु परम गति पावै।
मरै न आवै जाई। हरि हरि नामु धिआई।
ऐह ब्रह्म बिचारु सु जानै। जिसु दयालु होइ भगवानै।
बाबा नानक प्रभ सरणाई। सब चिंता गणत मिटाई।
(सोरठ महल्ला 5, पृष्ठ 623)

नोट : यहाँ यह बता देना चाहिए कि हरिमंदर साहिब के सरोवर में केवल स्नान कर लेने से इच्छित मुक्ति नहीं मिल सकती। इस 'शबद' का भाव, यात्रा और स्नान की रीति से ही न लिया जाए। सिख धर्म इस तरह की रस्मों–रीतियों की निन्दा करता है। वास्तव में, अमृतसर से दो सरोवरों का अर्थ है– एक अन्दर का सरोवर है और एक बाहरी। बाहरी सरोवर जल से भरा हुआ है। गुरसिखों का यह नियम है कि सवेरे स्नान करके अपने शरीर को साफ और स्वच्छ करे, "गुरु दरबार में" हाजिर होने से पहले, अर्थात् नाम सुमिरन करने से पहले। इस तरह अमृतसर में बाहरी सरोवर यही मनोरथ पूरा करता है। गुरसिख का कार्य यहीं पूरा नहीं हो जाता। गुरु अमरदास जी ने इसकी पुष्टि की है :

"मनि मैलै सभु किछु मैला तनि धोतै मनु हछा न होइ।"

(वडहंसु महल्ला 3, पृष्ठ 558)

फिर, दूसरा सरोवर अन्दरूनी सरोवर है, जो हरि का मंदिर है। यह सरोवर है –गुरबाणी– गुरु ग्रंथ साहिब जो अकाल पुरुख की महिमा गायन और आराधना–नाम से भरपूर है। बाहरी सरोवर में स्नान करके गुरसिख अन्दरूनी सरोवर में जाकर नाम के सरोवर में अपने अवगुणों से भरे मन को साफ करता है। गुरु नानक देव जी ने इसी को तीर्थ यात्रा कहा है :

"तीरथि नावण जाउ तीरथ नामु है।"

(धनासरी महल्ला 1, छंत, पृष्ठ 687)

बाहरी सारा सरोवर अमृत जल से भरा हुआ है। उसमें स्नान करके बाहरी जिस्म साफ करना होता है। उसके बाद, सरोवर के बिलकुल केन्द्र में अन्दरूनी सरोवर है– वह है गुरु ग्रंथ साहिब(नामु बाणी) का प्रकाश। उसमें अपने मन रूपी शरीर को स्नान करवाना ही असली स्नान है।

'नाम' के बिना पानी में अनगिनत बार स्नान करने से छुटकारा नहीं मिलेगा। 'नाम' के भीतरी सरोवर में मन की मैल धोना आध्यात्मिक प्रगति के लिए सबसे पहली आवश्यकता है। यह आध्यात्मिक चेतनता में परिपक्व करने और सनातन प्रकाश की राह की ओर ले जाने में सहायता करता है। गुरसिख अपना अन्दरूनी और बाहरी साफ करके 'नाम' की महिमा का अनुभव कर लेता है और सनातन आत्मिक सुख की अवस्था में पहुँच जाता है और अकाल पुरुख में समा जाता है। **जैसे जीवन के बगैर शरीर मुर्दा है, इसी तरह 'नाम' के बिना जीवन भी मृतक है।**

तो अमृतसर क्या है ?

जब अमृतसर शहर का कोई निशान नहीं था, तब भी गुरु नानक देव जी अपने श्रद्धालू सिखों को अमृतसर में स्नान करने के लिए उपदेश देते थेः

(क) "बिखिया मलु जाइ अमृतसर नावहु गुर सर संतोखु पाया।"
(मारू महल्ला 1, पृष्ठ 1043)

(ख) "गुरु सागरु अमृतसर जो इछे सो फलु पाए।"
(मारू महल्ला 1, पृष्ठ 1011–12)

(ग) "अंतरु निरमलु अमृतसरि नाए।"
(आसा महल्ला 3, पृष्ठ 363)

(घ) "अंदरहु तृष्णा अगनि बुझी हरि अमृतसरि नाता।"
(महल्ला 3, पउड़ी, पृष्ठ 510)

(ङ) "मैलु गई मनु निरमलु होआ अमृतसरि तीरथि नाइ।"
(महल्ला 3, पृष्ठ 587)

ऊपर दी गई गुरु नानक देव जी और गुरु अमरदास जी की बाणी की तुकों में अमृतसर कहा गया है, जबकि अमृतसर शहर या सरोवर का कहीं नाम भी नहीं था। इसका अर्थ है, जैसे इसका असली और शाब्दिक अर्थ है, अमृत का सरोवर, जो इलाही गुरबाणी है। सो अमृतसर की यात्रा का भाव है–अपने मन में अकाल पुरुख के नाम की यात्रा। बिना नाम, सैकड़ों स्नान मन की मैल नहीं निकाल सकते और इस कारण मुक्ति नहीं प्राप्त हो सकती :

"मलु हउमै धोती किवै न उतरै जे सउ तीरथ नाइ।"
(सिरी राग महल्ला 3, पृष्ठ 39)

गुरु जी कहते हैं कि 'नाम' के बगैर, अन्य सारे कार्य अपनी मुक्ति के लिए निष्फल हैं :

"नाम बिना फोकट सभि करमा जिउ बाजीगरु भरमि भुलै।"
(प्रभाती महल्ला 1, पृष्ठ 1343)

सरोवर और हरिमंदर के कार्य सम्पूर्ण हो जाने पर बहुत खुशियाँ मनाई गईं। सिखों ने भारी संघर्ष और कुर्बानियाँ की थीं, इस समस्त कार्य को करते हुए। गुरु जी ने उन सारे सिखों का सम्मान किया, जिन्होंने इन दोनों कार्यों की सम्पूर्णता को सच बनाने के लिए पूरी लगन से तन–मन के साथ सेवा की थी। इन गुरसिखों में से प्रमुख थे – भाई बुड्ढ़ा जी, भाई भगतु, भाई बाहला, भाई कलियाना, भाई अजब, भाई अजैब, भाई उमर शाह, भाई सांघो, भाई साल्हो और भाई जेठा। भाई बुड्ढ़ा जी को हरिमंदर साहिब की जिम्मेदारी सौंपी गई। भाई भगतु को मालवा इलाके में सिख धर्म का प्रचार करने के लिए नियुक्त किया गया और भाई साल्हो को शहर का संचालन–कार्य सौंपा गया, ताकि शहर का विकास हो जाने के बाद शहर की देखभाल करे। रामदासपुर शहर कुछ समय बीतने के बाद अमृतसर कहलाने लगा। यहाँ गुरु जी का निवास होने तथा भजन–बंदगी का केन्द्र स्थान होने के कारण अमृतसर सारे गुरसिखों की गतिविधियों का केन्द्र बन गया।

पृथी चंद का वैर भाव :

जैसा कि पिछले अध्याय में बताया गया था, गुरु रामदास जी ने अपने बड़े पुत्र पृथी चंद को छोड़कर गुरगद्दी इसके सबसे छोटे भाई अर्जन देव जी को दे दी थी। इस कारण पृथी चंद ने खुलेआम विरोध का रास्ता पकड़ लिया। वह लाहौर सूबे के एक माल अफसर सुलही खान से मिला और बताया कि वह अपने सबसे छोटे भाई के विरुद्ध बादशाह के पास शिकायत करने जा रहा है कि छोटे भाई ने उसका हक मार लिया है। उसके बाद, इसने इलाके के मुखिया के साथ मिलकर साजिश की, जिसने गुरु अर्जन

देव जी को कहा कि पृथी बड़ा पुत्र होने के कारण अपने पिता की जायदाद का हकदार है। गुरु जी ने जायदाद पृथी को दे दी और इसका कुछ हिस्सा दूसरे भाई महादेव को। गुरु जी ने सिखों की ओर से आई भेंटों को अपने पास रखा।

पृथी चंद ने सुलही खान से मिलकर गुरु जी को परेशान करने के लिए बहुत सारे अवसर तलाश लिए। पर बादशाह अकबर के सहायक प्रधान मंत्री वज़ीर खान ने गुरु जी का पक्ष लेकर सुलही खान को मनाया कि वह दोनों भाइयों में समझौता करवा दे। वज़ीर खान गुरु जी की बाणी सुखमनी का पाठ सुनकर जलोधर रोग से बिलकुल ठीक हो गया था। यही कारण था कि उसने गुरु जी के पक्ष की हिमायत की। हालांकि समझौता तो हो गया था, पर पृथी चंद की ओर से गुरु जी के लिए हर संभव तकलीफ खड़ी करना जारी रहा। आखिर, गुरु जी ने अमृतसर छोड़ देने और माझे (रावी नदी और ब्यास नदी के बीच का इलाका) की यात्रा करने का फैसला कर लिया।

गुरु जी के प्रचार दौरे :

गुरु जी पहले खडूर गये और फिर सरहाली पहुँचे, जहाँ उन्होंने अपने रहने के लिए जमीन लेकर रिहायशी स्थान बनाने का विचार बनाया।

भैणी गाँव से एक सिख ने गुरु जी को दर्शन देने के लिए विनती की। जब गुरु जी वहाँ पहुँचे तो अच्छी–खासी रात हो गई थी। गुरसिख की पत्नी ने रोटी के टुकड़े करके घी और शक्कर के साथ भोजन तैयार किया और गुरु जी के सम्मुख छकने के लिए रखा। प्रेम और श्रद्धा के साथ तैयार किया गया यह प्रसाद गुरु जी ने स्वाद के साथ छका। गुरु जी वहाँ कुछेक दिन रहे और लौटते समय आपने अपना चोला बख़्शा और गाँव का नाम बदलकर 'चोला साहिब' रख दिया।

फिर गुरु जी खानपुर गाँव गये जो गोइंदवाल और वर्तमान तरन तारन शहर के मध्य स्थित है। उनके साथ पाँच सिख चल पड़े, जिनमें भाई बिधी चंद और भाई गुरदास थे। यह एक ठंडी रात थी और सर्दी के मौसम की ठंडी हवाएँ बड़े जोर से चल रही थीं। बिधी चंद ने एक ऊँची इमारत देखी और गुरु जी से विनती की कि वह उसके अन्दर जाकर आराम करें। लेकिन, गुरु जी ने इन्कार कर दिया और कहा कि जहाँ तुम हो, वहीं वह भी ठहरेंगे क्योंकि उस जगह पर जहाँ कुकुर्मी लोग रह रहे हैं, जाने से अच्छा है कि वे यहीं रहें। भाई बिधी चंद न माना और उस इमारत के अन्दर जाकर उसके मालिकों से वहाँ ठहरने के लिए पूछा, पर उन मालिकों ने मना कर दिया, यह कहकर कि गुरु और उसके सिख पाखंड हैं। उस गाँव का एक बड़ा श्रद्धालू सिख जिसका नाम हेमा था, गुरु जी के पास आया और प्रार्थना की कि गुरु जी उस गरीब घर में चरण रखें और अपने पवित्र दर्शनों से घर को रब्बी मेहर बख़्शें। हेमा के प्रेम और श्रद्धा को देखकर गुरु जी ने उसका आतिथ्य स्वीकार कर लिया। हेमा ने गुरु जी और बाकी सिखों को अधिक से अधिक अच्छा भोजन तैयार करके अर्पण किया। उसके पास एक ही कम्बल था, जो उसने गुरु जी के नीचे बिस्तर के रूप में बिछा दिया। गुरु जी ने उसकी ऐसी श्रद्धा देखकर नीचे लिखे 'शबद' का उच्चारण किया :

"भली सुहावी छापरी जा महि गुन गाए।
कितहि कामि न धउलहर जितु हरि बिसराए । रहाउ।
अनदु गरीबी साध संगि जितु प्रभ चिति आए।
जलि जाउ ऐहु बडपना माया लपटाए।
पीसनु पीसि ओढ़ि कामरी सुखु मनु संतोखाए।
ऐसो राजु न किते काजि जितु नह तष्ताए।
नगन फितर रंगि ऐक कै ओहु सोभा पाए।
पाट पटंबर बिरथिआ जिह रचिलोभाए।
सभु किछु तुमरै हाथि प्रभु आपि करे कराए।
सासि सासि सिमरत रहा नानक दानु पाए।"

(राग सूही महल्ला 5, पृष्ठ 745)

गुरु जी वहाँ कुछ समय ठहरे। इस समय में हेमा की इच्छा पूरी हुई और वह आखिरी नींद सो गया। गुरु जी के वहाँ से चले जाने के बाद बादशाह के सूबेदार ने खानपुर के निवासियों से किसी कारण असंतुष्ट होने पर अपनी फौज भेजकर गाँव बरबाद कर दिया और यहाँ के खास निवासियों का कत्ल कर डाला।

वहाँ से गुरु जी खैरा गाँव की ओर चले गये, जहाँ के प्राकृतिक वातावरण ने गुरु जी को अपनी ओर खींचा। यहाँ के चौधरियों ने गुरु जी का जोरदार स्वागत किया। बाद में, उन्होंने गाँव वालों से जमीन लेने में गुरु जी की सहायता की। इस जमीन पर अब वाले प्रसिद्ध शहर तरन तारन की गुरु जी ने नींव रखी और वहाँ एक सरोवर बनाने का कार्य आरंभ करवाया। यह घटना सन् 1590 की है। गुरु जी ने बहुत बड़ा खर्च करके ईंटें पकाने के लिए भट्ठा बनवाया। वहाँ के स्थानीय अफसर नूर–उद–दीन ने एक सराय, जो सरकारी खर्च पर बन रही थी, के लिए ईंटें जबरदस्ती उठवा लीं। सिखों को बड़ा बुरा लगा और उन्होंने गुरु जी से विनती की कि नूर–उद–दीन की धांधलेबाजी के खिलाफ बादशाह के पास शिकायत लिखकर भेजी जाए। लेकिन, गुरु जी ने इस प्रकार धोखा दिए जाने की ओर ध्यान देने से इन्कार कर दिया। गुरु जी यहाँ से चुपचाप चले गये और इस कार्य के लिए अच्छे समय की प्रतीक्षा करने लगे। कुछ समय बाद सरोवर का काम पूरा किया गया।

फिर, गुरु जी ब्यास नदी पार करके जालंधर इलाके में गये, जहाँ उन्होंने जमीन खरीदी, करतारपुर नाम के नगर का निर्माण करने के लिए। गुरु जी ने नगर के निर्माण और नगरवासियों को पानी मुहैया करवाने के लिए कुएँ के निर्माण में पहला कट स्वयं अपने हाथों से लगाया। कुएँ का नाम गंगसर रखा।

वहाँ से गुरु जी अपने सिखों की विनती पर नाका गाँव में गये। उसके बाद खेमकरन, चूनियाँ और अन्य गाँवों में अपने चरण रखे। फिर, वह जंबर पहुँचे, जहाँ पर कुछ समय ठहरे। उस इलाके में गुरु जी ने बहुत सारे सिख बनाये।

गुरसिखों की विनती पर गुरु जी लाहौर गये। सभी वर्गों के लोग गुरु जी के दर्शन करने बड़ी संख्या में झुण्डों में आए। जोगी शंभुनाथ, शाह हुसैन, शाह सुलेमान और अन्य लोग भी गुरु जी से आत्मिक कल्याण के वास्ते धर्म की शिक्षा लेने के लिए विनती करने आए। गुरु जी ने उस समय इस 'शबद' का उच्चारण किया :

"मीरां दाना दिल सोच।
मुहबते मनि तनि बसै सचु साह बंदी मोच। रहाउ।
दीदने दीदार साहिब कछु नही इसका मोलु।
पाक परवदगार तू खुदि खसमु वडा अतोलु।
दसतगीरी देहि दिलावर तू ही तू ही ऐक।
करतार कुदरति करण खालक नानक तेरी टेक।

(तिलंग महल्ला 5, पृष्ठ 724)

यह 'शबद' जब लाहौर के सूबेदार ने सुना तो उसके मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। उसने गुरु जी के सम्मुख अपने लिए किसी सेवा की विनती की। गुरु जी की स्वीकृति पर उसने एक बावड़ी बनवा दी।

वहाँ से गुरु जी डेरा बाबा नानक गुरु नानक देव जी की याद में स्थापित गुरद्वारे के दर्शन करने गये।

उसके बाद गुरु जी अमृतसर लौट आए, पर पृथी ने अभी भी गुरु जी के लिए कठिनाइयाँ खड़ी करना जारी रखा। पृथी की पत्नी बहुत ही दुखी होकर शिकायत करती थी कि "सबसे बड़े पुत्र का हक मार कर सबसे छोटे पुत्र ने गुरगद्दी और सारा जगत संभाल लिया है, बादशाह और आम लोग दोनों इसकी पूजा करते हैं।" पृथी ने उत्तर दिया, "अर्जन का कोई बेटा नहीं है, सो उसका राजपाठ थोड़े समय के लिए ही है। हमारा पुत्र मेहरबान ही अगला गुरु होगा।" गुरु जी की पत्नी माता गंगा जी ने यह बातचीत सुनी और गुरु जी को बताई और साथ ही, पुत्र का दान बख्शने के लिए विनती की। गुरु जी ने माता गंगा जी से कहा कि वे पृथी या उसकी पत्नी की बातों की ओर ध्यान न दें, बल्कि अकाल पुरुख के नाम का जाप करते रहा करें। एक दिन, फिर माता जी ने गुरु जी से विनती की, "पातशाह, जो भी आपकी

शरण में आते हैं, वे इस जहान की खुशियाँ और अगले में मुक्ति का दान लेकर जाते हैं। मेरा विवाहित जीवन सबसे अधिक खुशहाल हो जाएगा, यदि आप मुझे भी एक पुत्र का दान बख़्शें।"

गुरु जी हमेशा ही अपने सिखों पर मेहर किया करते थे और बहुत सारे धार्मिक कार्य इन्हीं सिखों के माध्यम से ही होते थे। जब माता जी पुत्र के दान के लिए विनती करते रहे, तब गुरु जी ने कहा कि आदरणीय गुरसिख बाबा बुड्ढ़ा जी के पास जाओ और इस दान के लिए अरदास करो।

अगले दिन माता जी बड़ी तैयारी के साथ बाबा बुड्ढ़ा जी के पास गये। साथ ही, उन्होंने अपनी दासियों और अमृतसर के मुखियों की पत्नियों को भी संग ले लिया। वे रथों पर बैठकर बड़े आडम्बर के साथ चल पड़े। माता जी ने बाबा जी को भेंट करने के लिए मिठाइयों के थाल लिए। जब बाबा बुड्ढ़ा जी ने दूर से इस जुलूस को आते हुए देखा, तो कहने लगे, "यह क्या हुआ है ? क्या अमृतसर में भगदड़ मच गई है कि लोग शहर छोड़कर यहाँ आ रहे हैं ?" माता जी ने आकर बाबा जी के सामने मिठाइयों के थाल रखे और बख़्शीश के लिए विनती की। बाबा बुड्ढ़ा जी ने कहा, "आदरणीय बीबी जी, मैं तो गुरु घर का एक दास हूँ। केवल गुरु जी ही दैवी शक्तियों के भंडार है, जो हरेक की इच्छाओं की पूर्ति करते हैं। मैं तो इन स्वादिष्ट वस्तुओं के थालों के योग्य भी नहीं। अगर मैंने ऐसी वस्तुएँ खानी होतीं, तो उसके बाद मैं घास काटने का ख्याल क्यों करता ?"

सो, माता जी बहुत ही निराश होकर लौट आए और गुरु जी को सबकुछ विस्तार से बताया। गुरु जी ने कहा, "महापुरुष और सच्चे गुरु आडम्बर के दिखावे से खुश नहीं होते। अगर उनसे कुछ मांगना है तो उनके पास बड़े बनकर न जाओ, बल्कि बड़ा ही विनम्र होकर ढंग से जाओ। अगर आप अभी भी संत पुरुष की बख़्शीश चाहते हो तो आप अपने दिल से श्रद्धा के साथ प्रसाद तैयार करो, साधारण लोगों जैसे वस्त्र पहनकर पैदल अकेले जाओ।"

अगले दिन, माता जी गुरु जी के कहे अनुसार अकेले गये। उनको देखते ही बाबा बुड्ढ़ा जी बोले, "स्वागत है आदरणीय बीबी जी! दीजिए, आप जो लाए हो।" प्रसाद छकते हुए बाबा जी कहने लगे, "भंडारे के मालिक तो गुरु जी हैं, पर मुझे आज्ञा हुई है, इसे खोलने की। जैसा आपने मेरी मन–पसन्द का प्रसाद मुझे दिया है, वैसा ही आपको भी मनपसंद पुत्र प्राप्त होगा।" माता जी ने वापस लौटकर गुरु जी को बाबा जी की दयालुता के बारे में बताया।

जब पृथी ने यह सुना कि माता गंगा जी बालक को जन्म देने वाले हैं, तो वह और उसकी पत्नी बहुत परेशान हुए। उसने गुरु जी के विरुद्ध सुलही खान को उकसाया। झगड़े से दूर रहने के विचार से गुरु जी अमृतसर से करीब छह मील दूर वडाली गाँव में चले गये।

माता गंगा जी ने वडाली में 19 जून 1595 (21 आषाढ मास, सम्वत् 1652) को एक बालक को जन्म दिया, जिसका नाम हर गोबिंद रखा गया। बालक के जन्म पर गुरु जी ने इस 'शबद' का उच्चारण किया :

"सतिगुर साचै दीआ भेजि।
चिरुजीवनु उपजिआ संजोगि।
उदरै माहि आइ कीआ निवासु।
माता कै मनि बहुतु बिगासु।
जम्मिआ पूतु भगतु गोविंद का।
प्रगटिआ सभ महि लिखिया धुर का। रहाउ।
दसी मासी हुकमि बालक जनमु लीआ।"

(आसा महल्ला 5, पृष्ठ 396)

हर गोबिंद के जन्म के बारे में सुनकर पृथिया(पृथी चंद) और उसके घर के लोग बहुत ही दुखी हुए। उन्होंने झटपट बालक को मार देने की योजनाएँ बनानी आरंभ कर दीं। इस मनोरथ के लिए कई कोशिशें की गईं। पृथिया बच्चे को ज़हर देने के लिए एक दाई भाड़े पर लाया। दाई अपने स्तनों पर ज़हर लगाकर वडाली आई। कहा जाता है कि इस समय बालक किसी अस्वस्थता के कारण अभी दूध नहीं चूसता था। दाई ने आकर पहले माता गंगा जी को बालक के जन्म पर बधाई दी, फिर बच्चे को गोद में लेकर लाड–प्यार किया और अपने स्तनों से दूध पिलाने की कोशिश करने लगी। बच्चे ने दूध पीने से

इन्कार कर दिया। उसी वक्त दाई किसी रहस्यमयी कारणों से बेहोश होकर पीछे की ओर गिर पड़ी। जब होश में आई तो पछताने लगी। उसने बता दिया कि पृथिये ने उसे भाड़े पर लिया था, बालक को ज़हर देने के लिए। पृथिये द्वारा किए जाने वाले इस बुरे काम की बात घर–घर में फैल गई।

फिर पृथिया एक सपेरे को लेकर आया और कहा कि बालक के सामने काला नाग खुला छोड़कर बच्चे को मार दे। इस काम में सफल होने पर सपेरे को बहुत सारा धन देने का लालच पृथिये ने दिया। सपेरे को मौका मिल गया और उसने वडाली आकर घर के आँगन में काला नाग खुला छोड़ दिया। कहा जाता है कि बालक हर गोबिंद ने फूँकार मार रहे साँप को अपने हाथ में पकड़कर तुरन्त मार दिया।

गुरु जी के अमृतसर से चले जाने के बाद, दूर–दराज के स्थानों से गुरसिख दर्शन करने के लिए आए। पृथिये ने उन्हें भरोसा दिलाने की कोशिशें कीं कि असली गुरु वह है। लेकिन, वह अपने इस मनोरथ में सफल न हो सका। जब हर गोबिंद जी दो वर्ष के हुए तो कुछ जाने–माने सिख वडाली आए और गुरु जी के सम्मुख अमृतसर वापस आ जाने के लिए विनती की, जिसे गुरु जी ने स्वीकार कर लिया।

बालक हर गोबिंद चेचक के सख्त रोग से बीमार हो गया। लोगों ने गुरु जी को शीतला देवी की पूजा–अर्चना करने की सलाह दी। पर गुरु जी ने बालक को स्वस्थ करने के लिए देवी की पूजा करने की सलाह को मानने से मना कर दिया। इसके स्थान पर गुरु जी ने एक अकाल पुरुख, जो सबके रचयिता और एकमात्र पालनहार है, की पूजा पर जोर दिया। गुरु जी ने गुरु ग्रंथ साहिब में राज बिलावल और राग सोरठ में अंकित बहुत सारे 'शबद' उच्चारित किए। अकाल पुरुख की मेहर से बालक हर गोबिंद कुछ ही दिनों में बिलकुल अरोग हो गया।

पृथिये ने एक और कोशिश की। उसने बालक की देखभाल करने वाले नौकर को लालच देकर हर गोबिंद को ज़हर देने के लिए मना लिया। अगले दिन नौकर ने किसी तरह बालक के पीने वाले दूध में ज़हर मिला दिया। पर बालक ने मुँह मोड़ लिया और उस दूध को पीने से इन्कार कर दिया। नौकर ने बालक को लाड–प्यार से दूध पिलाने की कोशिश की, पर वह सफल न हो सका। नौकर ने जोर–जबरदस्ती की तो बालक रोने लग पड़ा। रोने की आवाज सुनकर गुरु जी ने नौकर से पूछा कि यह रोना किस कारण से है। नौकर ने उत्तर दिया कि बालक दूध नहीं पीता और जब जबरन पिलाने की कोशिश की तो बालक रो पड़ा। तब गुरु जी ने स्वयं दूध पिलाने की कोशिश की, पर बालक दूध न पीने की अपनी हठ पर अड़ा रहा। इस पर गुरु जी ने उसमें से थोड़ा–सा दूध लेकर एक कुत्ते को पिलाया, जो उसी समय गिर कर मर गया। नौकर को अपने इस बुरे काम का अहसास हुआ और उसने गुरु जी से क्षमा याचना की और पृथिये की ओर से बनाई गई खूनी योजना का भेद खोल दिया।

इस पर पृथिया आगबबूला हो उठा और वह सुलही खान के साथ दिल्ली गुरु जी के विरुद्ध बादशाह के पास शिकायत करने गया। उसके जाने से पहले गुरु जी के दूसरे भाई महादेव और भाई गुरदास ने पृथिये को रोकने की कोशिश की, पर वह तो सुनने के लिए राजी ही नहीं था। सुलही खान ने बादशाह के आगे शिकायत की। पर बादशाह ने धार्मिक महापुरुषों के मामलों में दखल न देने का फैसला किया और दूसरा निर्णय यह लिया कि शिकायत में लगाये गये दोष झूठे हैं। पृथिया बुरी तरह निराश हो गया।

जब हर गोबिंद की आयु शिक्षा लेने की हुई तो उन्हें विद्या देने के लिए भाई बुड्ढ़ा जी के सुपुर्द कर दिया। बाबा बुड्ढ़ा जी ने बालक को अच्छी विद्या दी और साथ ही, शस्त्रों की शिक्षा, घुड़सवारी, रसायन विज्ञान, खगोल विज्ञान, चिकित्सा, खेती बाड़ी, राज प्रबंध और अन्य कई विज्ञानों की शिक्षा भी दी। गुरु जी ने इस तरह की सफल और सबरंगी शिक्षा दी जाने के लिए बाबा बुड्ढ़ा जी की प्रशंसा की।

आदि ग्रंथ साहिब का सम्पादन :

पृथिया अपने ही धार्मिक भजन रच रहा था जिन्हें वह गुरु नानक देव जी और उनके उत्तराधिकारी गुरुओं की रची हुई बाणी कहता था। अनजान लोगों के पास इतनी बुद्धि नहीं थी कि वे इसकी असलीयत का निर्णय कर सकते। इसी कारण, गुरु अर्जन देव जी ने सिखों के रोजाना के धर्म कार्यों को दिशा देने के लिए कुछ नियम नियत करने की आवश्यकता महसूस की। उन्होंने आदि ग्रंथ के सम्पादन के लिए योजनाएँ

बनाईं। इस मनोरथ के लिए उन्होंने शहर के बाहर एक एकान्त स्थान चुना, जिसे अब रामसर कहा जाता है। वहाँ पर उन्होंने एक सरोवर खुदवाया। वहीं पर तम्बू लगा दिए। गुरु अर्जन देव जी सरोवर के पास निवास रख कर, भाई गुरदास जी को गुरबाणी लिखवाते गये। बाणी को रागों और तालों के अनुसार तरतीब दी गई। हरेक राग के अन्तर्गत पहले गुरु नानक देव जी की बाणी (महल्ला प्रथम) लिखवाई। फिर, दूसरे गुरु जी की (महल्ला–दूसरा) और इसी तरह आगे शेष गुरु साहिबान की बाणी। गुरु साहिब की बाणी के बाद, भगतों की बाणी अंकित हुई। इस प्रकार, आदि ग्रंथ में इकत्तीस भारतीय प्रामाणिक रागों के अधीन बाणी अंकित की गई। यहाँ तीस राग थे, इकत्तीसवाँ राग बाद में नौवे गुरु जी की बाणी है।

जब सारी बाणी अंकित हो गई तो गुरु जी ने अन्त में मुंदावणी का 'शबद' लिखवाकर अपनी छाप लगा दी :

"थालु विच तिन्नि वस्तू पईओ सतु संतोखु वीचारो।
अमृत नामु ठाकुर का पइओ जिस का सभसु अधारो।
जे को खावै जे को भुंचै तिस का होइ उधारो।
ऐह वस्तु तजी नह जाई नित नित रखु उरिधारो।
तम संसारु चरन लगि तरीऐ सभु नानक ब्रह्म पसारो।"
(मुंदावणी महल्ला 5, पृष्ठ 1429)

इसके बाद गुरु जी ने यह शबद उच्चारण किया जो अन्त में दर्ज है:

"तेरा कीता जातो नाही मैनो जोगु कीतोई।
मैं निरगुणिआरे को गुणु नाही आपे तरसु पइओई।
तरसु पइआ मिहरामति होई सतिगुरु सजणु मिलिया।
नानक नामु मिलै ता जीवा तनु मनु थीवै हरिया।"
(श्लोक महल्ला 5, पृष्ठ 1429)

एक मुसलमान, एक हिंदू महात्मा का भजन पढ़ना पसन्द नहीं करेगा और इसी तरह, एक हिंदू एक मुसलमान सन्त फकीर का कलाम नहीं सुनना चाहेगा। हिंदुओं ने निम्न जाति के परिवार में जन्मे किसी भी भक्त को हिंदू मंदिरों में आने से मनाही कर रखी थी। उस समय, इस तरह का धार्मिक कट्टरपन प्रचलित था। सो, गुरु अर्जन देव जी ने एक ऐसे सागर की रचना तैयार की जिसमें सारे दरिया और नदियाँ मिलकर सागर ही बन जाएँ। ऐसे सागर की रचना भादों कृष्णपक्ष 1, सम्वत् 1661(सन् 1604 ई.) को सम्पूर्ण हुई, जिसका नाम 'आदि ग्रंथ' रखा गया। यह किसी भी प्रकार से केवल सिखों की बाईबल(पवित्र धर्म पुस्तक) नहीं थी, बल्कि इसका प्रकार सर्व–व्यापक था। इसमें गुरु साहिबान की जीवनी नहीं अंकित की गई थी, बल्कि केवल सर्व–व्यापी सच, जिसका एक–एक 'शबद' केवल सर्व–शक्तिमान अकाल–पुरुख की महिमा को अर्पण किया हुआ था।

आदि गुरु ग्रंथ साहिब में पहले पाँच गुरु साहिबान के 4,840 शबद हैं। 15 भगतों के 778 शबद अंकित हैं। इनमें से दो भगत मुसलमान और बाकी के हिंदू (ब्राह्मण भी और शूद्र आदि भी) हैं। ये फकीर और भगत थे – भगत बेणी, भीखन, धन्ना, फरीद, जैदेव, कबीर, नामदेव, परमानंद, पीपा, रामानंद, रविदास, सैण, सधनां, सूरदास और त्रिलोचन। इसमें 11 भट्टों के 121 सवैये(कुछ लोग 123 कहते हैं) भी अंकित हैं(भट्ट और ढाडी)। ये भट्ट (पुरातन ढंग के गीतकार) सब ब्राह्मण थे और फिर ये गुरु जी के सिख बन गये। ये इस प्रकार थे : कल, जलप, भिका, सल, भल, नल, बल, गिअंद, मथुरा, कीरत और हरबंस। इसमें सत्ता और बलवंड की वार, सुंदर की रामकली सद और गुरु नानक देव जी के रबाबी मरदाना के 17 शबद भी अंकित हैं। इस प्रकार, श्री आदि ग्रंथ साहिब में 5756 शबद थे (कुछ 5758 शबद कहते हैं)।

यह महान कार्य 15 अगस्त 1604 को सम्पूर्ण हुआ। भाई बन्नो को इसकी जिल्द बनाने के लिए लाहौर शहर भेजा गया। कहा जाता है कि भाई बनो ने एक और कापी तैयार कर ली और इस में कुछ तुकों में अन्तर है। भाई बनो वाली बीड़ अब कानपुर में उसकी औलाद के पास है। श्री आदि ग्रंथ साहिब की बीड़, धीर मल जो छठे पातशाह गुरु हर गोबिंद साहिब का पौत्र था, उसकी सन्तान के पास करतारपुर

में हैं (करतारपुर जालंधर से अमृतसर के रास्ते में है)। इस बीड़ का धीरमलिये साल में एक बार वैशाखी वाले दिन प्रकाश करते हैं जहाँ संगत इसके दर्शन कर सकती है।

भादों शुक्ल पक्ष 1, सम्वत् 1661(30 अगस्त सन् 1604 ई.) को आदि ग्रंथ साहिब का प्रकाश हरिमंदर साहिब में किया गया और बाबा बुड्ढ़ा जी पहले ग्रंथी नियुक्त किये गए।

जब प्रकाश हुआ और हुक्मनामा लिया गया तो यह हुक्मनामा था :

संता के कारजि आपि खलोइआ हरि कंमु करावणि आया राम।
धरति सुहावी तालु सुहावा विच अमृत जलु छाया राम।
अमृत जलु छाया पूरन साजु कराआ सगल मनोरथ पूरे।
जै जैकारु भइया जग अंतरि लाथे सगल विसूरे।
पूरन पुरख अचुत अबिनासी जसु वेद पराणी गाया।
अपना बिरदु रखिया परमेसरि नानक नामु धिआया।
(सूही महल्ला 5, पृष्ठ 783)

पृथी चंद की ईर्ष्या का जारी रहना :

पृथिया ने काजियों और पंडितों जो गुरु जी के 'आदि ग्रंथ साहिब' के सम्पादन का विरोध कर रहे थे, को एकत्र करके उकसाया कि वे बादशाह के पास शिकायत करें कि गुरु अर्जन देव ने एक ग्रंथ बनाया है जिसमें मुसलमान पैगम्बर और देवताओं की निन्दा की गई है। इस पर बादशाह ने गुरु जी को ग्रंथ साहिब सहित बुला भेजा। गुरु जी स्वयं तो नहीं गये, पर बाबा बुड्ढ़ा जी और भाई गुरदास को भेज दिया कि ग्रंथ साहिब में से 'शबद' पढ़ कर बादशाह को सुना दें। उन्होंने बादशाह अकबर को कई 'शबद' पढ़कर सुनाये और बादशाह बहुत ही खुश हुआ, "अल्लाह के वास्ते प्रेम और भगती के बगैर इस ग्रंथ में मुझे किसी की खुशामद या निन्दा नहीं मिली। यह ग्रंथ इज्ज़त के लायक है।" गुरु जी पर तोहमतें लगाने वाले और विरोधी लोग चकरा गये। अकबर ने बाबा बुड्ढ़ा जी और भाई गुरदास जी को सिरोपे भेंट किए और इकरार किया कि वह लाहौर से वापस लौटते हुए गुरु जी के दर्शन करने आएगा।

इकरार के अनुसार अकबर लाहौर से दिल्ली लौटते समय राह में गुरु जी के दर्शन करने के लिए आया। वह गुरु जी के पवित्र दर्शन और व्यवहार से मुग्ध हो उठा और अति प्रसन्न हुआ। उसने गुरु जी का आतिथ्य भी स्वीकार किया और विनती की कि अपनी सांसारिक और आध्यात्मिक भलाई और खुशी कायम रखने के लिए कोई सेवा करने की इजाज़त दें। गुरु जी ने उत्तर दिया, "बादशाहों की भलाई और खुशी अपनी प्रजा के हित और इन्साफ करने पर आधारित है।" फिर गुरु जी ने कहा कि देश में सख़्त अकाल पड़ा हुआ है और किसान लोगों को बादशाह की ओर से सहायता की ज़रूरत है। बादशाह ने उस वर्ष का पंजाब के किसानों का मालिया माफ कर दिया। बादशाह द्वारा गुरु जी का सत्कार किए जाने से गुरु जी की प्रसिद्धि और प्रभाव बहुत बढ़ गये थे। इस कारण पृथिये की चिन्ता में वृद्धि हो गई।

गुरु अर्जन देव जी की शहादत :

गुरु अर्जन देव जी के समय में बहुत से लोगों ने न केवल पंजाब और भारत के अन्य हिस्सों में, बल्कि पड़ोसी देशों में भी सिख धर्म धारण किया। कहा जाता है कि कुल्लू, सुकेत, हरीपुर और चम्बा के पहाड़ी राजा, गुरु जी के श्रद्धालू बने, जैसे कि मंडी का राजा बना था। गुरु जी का यश और प्रभाव दूर–दूर तक फैल गया।

उस समय चंदू लाल बादशाह अकबर का दीवान अथवा आर्थिक सलाहकार था। वह जाति से खत्री और पंजाब के गुरदासपुर जिले में रोहाला गाँव का रहने वाला था। उसके सरकारी कामों के कारण उसका दिल्ली में रहना ज़रूरी था। उसकी एक बहुत सुंदर जवान बेटी थी। बेटी की माँ ने एक दिन इसके पिता से कहा, "हमारी बेटी जवान हो गई है। इसके लिए कोई वर ढूँढ़ना चाहिए।" चंदू लाल ने अपने परिवार के पुरोहित और नाई को बेटी के लिए योग्य वर खोजने के लिए भेजा। पुरोहित और नाई पंजाब के हर शहर

में घूमे, पर उपयुक्त वर न मिला। एक दिन, फिर चंदू की पत्नी ने उन्हें जोर दिया कि वे अपने प्रयत्न जारी रखें। सो, पुरोहित और नाई फिर से इस कार्य के लिए भेजे गये। खोजते–खोजते जब वे लाहौर पहुँचे तो उन्होंने किसी से गुरु जी के जवान पुत्र हर गोबिंद के बारे में सुना। वे अमृतसर गये और उन्हें हर गोबिंद चंदू लाल की बेटी के लिए सबसे सुशील और योग्य वर लगा। उन्होंने वापस आकर चंदू को बताया। उन्होंने हर गोबिंद की श्रेष्ठता और अमृतसर में उसके पिता गुरु अर्जन देव जी की हो रही इज्ज़त के बारे में अपने विचार रखे। चंदू गुरु जी का गुणगाण सुनकर खुश न हुआ, सो उसने पुरोहित और नाई से पूछा, "क्या तुम उसे मेरी हैसियत के बराबर समझते हो ? गुरु जी की जाति मेरे से छोटी है। तुम शानदार चौबारे की ईंट को मोरी में लगाना चाहते हो ? मैं कहाँ, बादशाह का आर्थिक वजीर और गुरु कहाँ, बेशक वह अपने श्रद्धालुओं के लिए ऊँचा सम्मान रखता हो।"

पति–पत्नी के बीच रात भर इस मामले में वाद–विवाद होने के बाद यह फैसला हुआ कि बेटी सदा कौर का विवाह हर गोबिंद के साथ किया जाए। सो, विवाह का शगुन अमृतसर भेजा गया।

दिल्ली के सिखों के कानों तक भी यह बात पहुँच गई थी कि चंदू ने गुरु जी के प्रति अपमानजनक शब्द कहे थे। उन्होंने एक सिख को एक पत्र लिखकर दिया और अमृतसर भेजा। पत्र में चंदू की ओर से कही गई बातों का सारा वर्णन किया गया था और गुरु जी से विनती की गई थी कि इस रिश्ते से इन्कार कर दिया जाए। दिल्ली की सिख संगतों और अमृतसर की संगतों ने भी गुरु जी के सम्मुख प्रार्थना की कि चंदू जैसे अंहकारी के साथ नाता जोड़ना स्वीकार न किया जाए। गुरु जी अपनी सिख संगतों की सलाह मानने के लिए मजबूर थे, सो उन्होंने बड़ी विनम्रता के साथ रिश्ता देने आए सज्जनों से कहा, "मैं अपनी अदनी–सी हैसियत पर सन्तुष्ट हूँ और बड़े लोगों के साथ नाता नहीं जोड़ना चाहता। एक शानदार चौबारे की ईंट को एक मोरी में नहीं लगाना चाहिए।"

जब रिश्ता लेकर आए लोग रोष प्रकट कर ही रहे थे, तब एक सिख नारायण दास जो भाई पारो(गुरु अमरदास जी का प्रसिद्ध सिख) का पौत्र था, संगत में से खड़ा हुआ और गुरु जी के आगे प्रार्थना करने लगा, "पातशाह, मैं आपके चरण–कमलों की धूल हूँ। मेरी एक पुत्री है जिसको मैंने और मेरी पत्नी ने आपके सुपुत्र के साथ विवाह के लिए भेंट करने का संकल्प किया हुआ है। अगर आप मेरी पुत्री को अपने चरणों की सेवक बना लो, तो मैं सौभाग्यशाली होऊँगा। मैं एक गरीब सीधा–सादा सिख हूँ और आप गरीबों, असहायों के मान हो।" गुरु जी ने उत्तर दिया, "अगर तुम्हारे हृदय में प्रेम है तो मुझे तुम्हारी तजवीज़ स्वीकार है।" नारायण दास फौरन गया और उसने विवाह में देने योग्य वस्तुएँ खरीदीं और कुड़माई(सगाई) की रस्म की गई। इस पर एक और सिख हरी चंद खड़ा हुआ और गुरु जी के आगे प्रार्थना की, "हे सच्चे पातशाह, मैंने अपनी पुत्री का हर गोबिंद जी के साथ रिश्ता करने का संकल्प किया हुआ है। अगर मेरी विनती आपको परवान हो तो मैं अपनी पुत्री हर गोबिंद जी की चाकर के तौर पर अर्पण कर दूँगा।" गुरु जी ने पहले तो अपने सुपुत्र के लिए दूसरी पत्नी का विचार परवान नहीं किया, पर फिर महसूस किया कि वह एक वफादार और निष्ठावान सिख की याचना को ठुकरा नहीं सकते।[1]

यह सब कुछ चंदू की ओर से रिश्ता करवाने आए सज्जनों के सामने घटित हुआ। वे दिल्ली लौट आए और अपने मालिक को बुरी खबर सुनाकर निराश कर दिया। चंदू को यह सब सुनकर बहुत क्रोध आया और उसने गुरु जी को एक पत्र लिखकर भेजा, जिसमें उसने अनजाने में कही गई अपनी
पिछली बातों के लिए माफी मांगी। उसने गुरु जी को दलील पेश की कि यदि वे उसकी बेटी का रिश्ता स्वीकार कर लें, तो वह बेटी को बहुत भारी दहेज देगा और बादशाह से गुरु जी को बहुत लाभ दिला देगा। अन्त में लिखा कि आपके पहले ही अपने भाई पृथी चंद से संबंध बिगड़े हुए हैं और अगर मेरे साथ भी आपने बिगाड़ लिए तो इससे ऐसी आग भड़क सकती है जो बुझानी कठिन हो जाएगी।

चंदू ने यह पत्र पुरोहित के हाथ देकर भेजा। इस पत्र को पढ़कर गुरु जी ने कहा, "यह अंहकार है जो मनुष्यों को बर्बाद कर देता है। मनुष्य अपने कर्मों के कारण दुख पाता है। जिन्हें कर्ता पुरुष जोड़ता है, वे जुड़ जाते हैं और जिन्हें मनुष्य जोड़ते हैं, वे नहीं जुड़ते। यह गुरु का नियम है कि वह अपने सिखों की इच्छाओं को माने। सिखों के वचन अटल हैं।[2] बाकी रहा चंदू की धमकियों का विचार, मुझे कोई डर नहीं क्योंकि अकाल पुरुख सबकी रक्षा करता है।" पुरोहित यह सन्देश लेकर वापस लौट गया। इससे चंदू के बुरे इरादों की नींव पड़ गई।

इसके बाद जल्द ही बादशाह अकबर का निधन हो गया और उसका पुत्र जहाँगीर गद्दी पर बैठा। अकबर ने अपने पुत्र की बजाय अपने पोते खुसरो को गद्दी पर बैठने के लिए नामजद किया हुआ था। खुसरों ने पंजाब और अफगानिस्तान पर हक मांगा जो उसका बाप जहाँगीर देने को तैयार नहीं था। जहाँगीर ने खुसरों को कैद करने का हुक्म दे दिया, लेकिन खुसरो बचकर अफगानिस्तान की ओर चला गया। राह में वह तरन तारन में गुरु जी से मिला और कहा कि वह बेयार, ज़रूरतमंद और गरीब है और उसके पास सफ़र के लिए खर्चा भी नहीं है। सो, उसने गुरु जी से आर्थिक सहायता मांगी।1

खुसरो अपने दादा अकबर के साथ गुरु जी से मिल चुका था और गुरु जी उसे भलीभाँति जानते थे। दूसरा, गुरु घर में मित्र या दुश्मन, राजा या भिखारी, सबसे समान व्यवहार होता है। गुरु जी जानते थे कि आगे क्या घटित

होने वाला है, पर शहजादे की हालत देखकर उन्होंने उसको आर्थिक सहायता दे दी।[3] लेकिन, खुसरो जेहलम दरिया पार करते हुए पकड़ा गया। शाही फौजें उसे जंजीरों से जकड़कर उसके बाप जहाँगीर के पास ले आईं।

पृथिये ने गुरु जी के विरुद्ध सुलही खान की मदद और उससे मिलने–जुलने का सिलसिला बनाये रखा। पंजाब में लगान एकत्र करने के बहाने सुलही खान ने बादशाह से छुट्टी ली। राह में वह कोठा गाँव में पृथिये से मिला और गुरु जी को तबाह करने की योजनाएँ बनाईं। पर उस समय सुलही खान को पृथिया अपना ईंटों का भट्टा दिखाने ले गया, जहाँ सुलही खान अचानक भट्ठे में गिर जाने से जलकर मर गया।

अपने साथी की मृत्यु पर पृथिया बहुत ही दुखी हुआ। इन हालातों में चंदू पृथिये की मदद के लिए आ मिला और सुलही खान वाली दरार भर गई। चंदू ने अपनी पुत्री का रिश्ता हर गोबिंद से करवाने की खातिर पृथिये को अपना प्रभाव इस्तेमाल करने के लिए एक पत्र लिखा। पृथिया चंदू को गुरु जी के विरुद्ध अपनी हर बुरी सलाह की मदद करने के लिए तैयार था। उसने पत्र के उत्तर में लिखा कि गुरु जी ने उसकी गुरगद्दी का हक मार रखा है, अतः वे तो पहले ही उनके दुश्मन हैं और वह (पृथिया) गुरु जी को अच्छी सजा दिलवाने में मदद करके बड़ा खुश होगा। अपने पत्र में उसने चंदू की खुशामद की कि वह बादशाह के साथ अपने प्रभाव का इस्तेमाल करके गुरु जी को इन्साफ के रास्ते पर लाए। इस प्रकार, दोनों ने एक योजना बनाई कि बादशाह को किसी तरह पंजाब लाने के लिए मनाया जाए और वहाँ इन्हें गुरु जी के खिलाफ कोई साज़िश घड़ने का मौका मिल जाएगा।

चंदू की चाल सफल हो गई और जल्द ही बादशाह जहाँगीर पंजाब आया। चंदू ने बादशाह को बताया कि गुरु अर्जन पंजाब में चोरों की खातिरदारी करके और अपने स्वतंत्र इख्तियार का इस्तेमाल करके बादशाह का प्रतिद्वंदी बन रहा है। इस पर बादशाह ने सुलही खान के भतीजे सुलबी खान के हाथ गुरु जी को सन्देशा भेजा कि वह इन हरकतों से बाज आ जाएँ।

अमृतसर जाते हुए राह में सुलबी खान की मुठभेड़ कुछ पठानों से हो गई और वह मारा गया। जब चंदू को सुलबी खान की मौत की खबर मिली तो उसने बादशाह को विश्वास दिला दिया कि यह मौत गुरु जी की साज़िशों का ही नतीजा है। साथ ही, बादशाह से यह भी कहा कि गुरु ने अपने बड़े भाई का गुरगद्दी का हक छीन लिया है और हिंदुओं और मुसलमानों का धर्म परिवर्तन करने की कोशिश कर रहा है। बादशाह ने उसी वक्त पृथिये को बुलाया। यह शाही निमंत्रण पाकर वह बहुत खुश हुआ। उसने बादशाह के सम्मुख उपस्थित होने के लिए तैयारियाँ कीं, पर रात का खाना खाने के बाद उसके पेट में दर्द उठा और वह उसी रात मर गया।

पृथिये के पुत्र मेहरबान ने अपने पिता की मौत के बाद चंदू को खबर करने में जरा भी ढील न की। चंदू ने बादशाह को इसकी खबर दी और कहा कि गुरु ने खुसरो को आशीर्वाद दिया था और इकरार किया था कि खुसरो बादशाह बनेगा। बादशाह को यह भी सूचना दी गई कि पंडित और काज़ी दोनों गुरु से 'आदि ग्रंथ' के संकलन के कारण बहुत खफा है, क्योंकि ग्रंथ में हिंदुओं के पूजा के उसूलों और मुसलमानों के नमाज़ और रोज़ों की बेअदबी की हुई है। इस तरह के दोष बताकर चंदू ने बादशाह को मना लिया कि वह गुरु अर्जन को दरबार में हाजिर होने का हुक्म जारी करें।

बादशाह जहाँगीर ने अपनी आत्मकथा में लिखा है :

"गोइंदवाल जो ब्यास नदी के किनारे है, में अर्जन नाम का एक हिंदू दरवेशों की तरह पवित्र वस्त्र पहने रहता था और उसने सीधे–सादे हिंदुओं, अनजान और मूर्ख मुसलमानों को अपने तौर–तरीकों से वश में कर रखा था। इन लोगों ने उसकी पवित्रता का ढोल बहुत जोरशोर से बजा रखा था। वे उसे गुरु कहकर बुलाते थे और हर तरह के बेवकूफ लोग इकट्ठा होकर उसकी पूजा करते थे और उस पर पूरा विश्वास रखते थे। तीन या चार पुश्तों से उन्होंने यह दुकान गरम कर रखी थी। कई बार मुझे ख़्याल आया कि इस खोखले मामले को बन्द किया जाए या उसे इस्लाम में शामिल कर लिया जाए।

आखिर, जब खुसरो इस रास्ते से गुजरा तो इस मामूली आदमी ने उससे मिलने की तजवीज़ बनाई। खुसरो इत्तेफाकन उसी जगह पर ठहरा हुआ था, जहाँ यह रहता था, और इसने बाहर आकर उसे इज्ज़त दी। इसने खुसरो के साथ कुछ खास तरीकों से बर्ताव किया और उसके माथे पर केसर का उंगली से निशान लगाया, जिसे हिंदुस्तान लोग कशका कहते हैं और शुभ मानते हैं। जब मेरे कानों तक यह बात पहुँची और मैंने इसके कुफ्र को अच्छी तरह जान लिया, मैंने हुक्म दिया कि इसे मेरे सामने पेश किया जाए और उसके मकान, रिहायशी जगह और बच्चे मुतर्ज़ा खान(शेख फरीद बुखारी) के हवाले करवाकर और इसकी जायदाद को ज़ब्त कराकर मैंने हुक्म दिया कि इसे यातनाएँ देकर मार दिया जाए।"

बादशाह के पास गुरु जी को पेश करने का हुक्म और गुरु जी की शहादत, इन दोनों घटनाओं के पीछे जो कारण थे, वे इस प्रकार हैं :

पहला – गुरु जी का बड़ा भाई पृथी चंद जिसने अपनी सारी उम्र हर संभव तरीके से उन्हें नुकसान पहुँचाने में लगा दी। दूसरा– चंदू का वैर था। उसकी बेटी का गुरु जी के सुपुत्र से रिश्ते का न होना, मुख्य भड़काऊ तत्व समझा जाता है। इन दोनों मनुष्यों ने अपने दिलों में ईर्ष्या के साथ खुसरो की कहानी घड़कर बादशाह जहाँगीर के गुस्से को भड़काया, जिसने जलती आग पर तेल का काम किया। इन हालातों के साथ–साथ, गुरु जी के बढ़ रहे प्रभाव के अधीन हिंदुओं और मुसलमानों के बहुत भारी संख्या में सिख धर्म को अपनाने के कारण पंडितों (ब्राह्मणों) और काज़ियों के मनों में हलचल पैदा हो गई। 'आदि ग्रंथ' के सम्पादन को दूसरे धर्मों पर गंभीर खतरा समझा गया। इन सब हालातों के चलते गुरु अर्जन देव जी मुसलमान बादशाह की कट्टरता और नष्शंसता का शिकार हो गये।

गुरु जी ने लाहौर जाने से पहले अपने सुपुत्र हर गोबिंद जी को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर दिया था और मुनासिब आदेश दे दिए थे। उन्होंने अपने साथ पाँच सिख– भाई विधी चंद, भाई लंघाहा, भाई प्यारा, भाई जेठा और भाई पिराना– ले लिए। कई लेखकों का कहना है कि गुरु जी के लाहौर पहुँचने से पहले बादशाह जहाँगीर कश्मीर चला गया था।

बादशाह जहाँगीर ने गुरु जी से कहा था, "तू एक दरवेश, एक महान उस्ताद और एक धर्मात्मा पुरुष है और अमीर और गरीब को एक–सी नज़र से देखता है। इसलिए तुझे मेरे दुश्मन खुसरो को रुपया–पैसा देना मुनासिब नहीं था।" इस पर गुरु जी ने उत्तर दिया, "मैं सब लोगों को, हिंदू या मुसलमान, अमीर या गरीब, दोस्त या दुश्मन, बराबर समझता हूँ, और इसीलिए मैंने खुसरो को उसके सफ़र के खर्च के लिए कुछ रकम दी थी, इसलिए नहीं कि वह तेरा दुश्मन है। अगर मैं उसकी बेसहारा हालत में मदद करके, तेरे पिता बादशाह अकबर की ओर से मुझ पर की गई मेहरबानी का आदर न करता, तो सब लोग मुझे मेरी पत्थरदिली और नाशुक्रगुजारी के लिए बुरा कहते, या फिर वे यह समझते कि मैं तेरे से डरता हूँ। यह बात गुरु नानक के एक श्रद्धालू के लिए ठीक नहीं।"

गुरु जी के उत्तर से जहाँगीर को तसल्ली न हुई और उसने गुरु जी को दो लाख रुपया जुर्माना देने और आदि ग्रंथ में से हिंदू और मुस्लिम धर्मों के विरोधी 'शबदों' को मिटा देने का हुक्म दे दिया। गुरु जी ने उत्तर दिया, "जो कुछ रुपया मेरे पास है, वह गरीबों, बेसहारों और अतिथि लोगों के वास्ते है। अगर तुझे रुपये की ज़रूरत है, तो जो मेरे पास है, तू ले सकता है। पर अगर तू जुर्माने के तौर पर मांगेगा, तो मैं तुझे एक कौड़ी भी नहीं दूँगा, क्योंकि जुर्माना बेईमान दुनियावी लोगों पर लगाया जाता है, धर्मात्मा और सन्त महात्मा पुरुषों पर नहीं। जहाँ तक आदि ग्रंथ में से 'शबद' निकालने की बात है, मैं इसमें से एक मात्रा तक बदल या मिटा नहीं सकता। मैं अकाल पुरुख का पुजारी हूँ। उसके सिवाय दूसरा कोई पातशाह

नहीं और जो उसकी ओर से गुरुओं को बाणी उतरी है, गुरु नानक देव जी से लेकर गुरु रामदास जी तक, और इसके बाद मुझे, उसे एक पवित्र ग्रंथ में लिख दिया गया है। 'आदि ग्रंथ' में कोई 'शबद' हिंदू अवतारों या किसी मुसलमान पैगम्बर का अनादर नहीं करता। इसमें यकीनी तौर पर लिखा गया है कि पैगम्बर, महात्मा पुरुष और अवतार एक अकाल पुरुख के बनाये हुए हैं जिसका कोई अन्त नहीं जान सकता। मेरा मुख्य मंतव्य, सत्य का प्रसार करना और झूठ का नाश करना है। और यदि इस मंतव्य को पूरा करते समय मेरा यह नाशवान शरीर चला जाता है, तो मैं इस को अपना सौभाग्य समझूंगा।"

बादशाह पंजाब से चला गया और गुरु जी को चंदू की निगरानी के अधीन छोड़ गया। कई लेखकों का मत है कि गुरु अर्जन देव जी की शहादत केवल लगान न देने की आम सजा ही थी, और कुछ नहीं। लगता है कि ये लेखक सिख धर्म से बिलकुल अनजान हैं। जब लाहौर के सिखों को दो लाख जुर्माने का पता चला तो उन्होंने यह रुपया एकत्र करके जुर्माना अदा करने का फैसला किया। गुरु जी ने सिखों को सख्त चेतावनी दी कि अगर कोई इस तरह जुर्माना अदा करने के लिए रकम देगा, तो वह मेरा सिख नहीं होगा। जैसा कि ऊपर दिए गये गुरु जी के उत्तर में बताया गया है, यह मामला उसूल का था, दो लाख रुपयों का नहीं, जो आँख झपकते ही इकट्ठा हो सकता था। जुर्माने चोरों, डाकुओं, बदनाम और शैतान लोगों के लिए होते हैं। जो लोग ऐसे नहीं है और धर्म में श्रद्धा रखते हैं, उनके लिए नहीं। सो, यह कहना निराधार है कि गुरु जी की शहादत का मामला लगान न देने की आम सजा थी। काज़ियों और ब्राह्मणों ने पेशकश की कि गुरु जी मौत के बदले आदि ग्रंथ में से कथित आपत्तिजनक 'शबद' निकालकर उनकी जगह मुहम्मद साहिब और हिंदू देवताओं की प्रशंसा लिख दें। गुरु जी अपने विचारों से जरा भी न बदले।

गुरु अर्जन देव जी को गर्म–गर्म तवे पर बिठाया गया और उनके नंगे बदन पर जलती हुई रेत डाली गई। उन्हें उबलते पानी की देग में बिठाया गया। गुरु जी का शरीर छालों से भर गया।

गुरु जी का मित्र और श्रद्धालू मीआं मीर, एक मुसलमान दरवेश, गुरु जी को देखने के लिए दौड़ा आया। जब उसने दर्दनाक नज़ारा देखा तो वह चीत्कार कर उठा और बोला, "हे मालिक, आप पर हो रहे इस क़हर को देखना मैं बरदाश्त नहीं कर सकता। अगर हुक्म हो तो मैं यह जालिम राज तबाह कर दूँ।"

गुरु जी मुस्कराये और मीआं मीर को ऊपर आसमान की ओर देखने के लिए कहा। कहा जाता है कि मीआं मीर ने देखा, फरिश्ते गुरु जी से हाथ जोड़कर इस दुष्ट और अंहकारी राज को तबाह कर देने के लिए आज्ञा मांग रहे थे।

गुरु जी मीआं मीर को सम्बोधित हुए, **"मीआं मीर, आप इतनी जल्दी घबरा गये। यह मेरे मालिक (अकाल पुरुख) का हुक्म है और मैं इसे खुशी से स्वीकार करके उसकी मधुर इच्छा के आगे सिर झुका रहा हूँ।" गुरु जी ने फिर यह 'शबद' दुहराया और इसके अनुसार एक मिसाल पैदा की :**

"तेर कीआ मीठा लागै।
हरि नामु पदारथु नानकु मांगै।

(आसा महल्ला 5, पृष्ठ 394)

गुरु जी ने यह कष्ट शान्त चित्त रहते हुए सहन किया और न तो कोई आह भरी और न ही कराहे। गुरु जी अडोल रहे। वह सागर की भांति स्थिर और गम्भीर रहे। गुरु जी पूर्ण आनंद की अवस्था में थे। एक अकाल पुरुख का चमत्कार था– एक लासानी मिसाल !

मीआं मीर ने पूछा, **"आप यह कष्ट इन नीच गुनाहगारों के हाथों क्यों सहन कर रहे हैं, जबकि आपके पास दैवी शक्तियाँ हैं ?" गुरु जी ने उत्तर दिया, "मैं ये सब कष्ट सच्चे 'नाम' के उपदेशकों के लिए एक मिसाल कायम करने के लिए सहन कर रहा हूँ कि वे दुख के समय धैर्य को न छोड़े या विपदा के समय अकाल पुरुख को दुर्वचन न बोलें। श्रद्धा की सच्ची परख दुख का समय है। ऐसी दिशा देने वाली मिसालों के बगैर साधारण लोगों के मन कष्ट के समय हिम्मत हार जाते हैं।"** यह सुनकर मीआं मीर गुरु जी की सहनशक्ति की प्रशंसा करते और उनकी महिमा का गान करते हुए चला गया।

गुरु जी से फिर दुश्मनों की मांगों को मान लेने के लिए पूछा गया। जब उन्होंने और अधिक यातनाएँ देने की धमकी दी, तो गुरु जी ने कहा, "ओ मूर्खो, मैं यातनाओं से कभी नहीं डरुँगा। यह सब

अकाल पुरुख की रज़ा के अनुसार है और इसे करके कोई भी कष्ट मुझे खुशी प्रदान करेगा।" गुरु जी ने इस 'शबद' का उच्चारण किया :

"फूटो आंडा भरम का मनहि भहिओ परगासु।
काटी बेरी पगह तगुरि कीनी बंदिखलासु।
आवण जाणु रहिओ। तपत कड़ाहा बुझि गया
गुरि सीतल नाम दीओ। रहाउ।
जब ते साधू संगु भइया तउ छोडि गये निगहार।
जिस की अटक तिस ते छुटी तउ कहा करै कोटवार।
चूका भारा करम का होए निरकरमा।
सागर ते कंढै चड़े गुरि कीने धरमा।
सचु थानु सचु बैठका सचु सुआउ बणाया।
सचु पूंजी सचु वखरो नानक घरि पाया।"

(मारू महल्ला 5, पृष्ठ 1002)

चंदू ने सोचा कि गुरु जी को गउ की एक ताजी खाल में डालकर सिल दिया जाए जिसमें सांस घुट जाने से इनकी मृत्यु हो जाएगी। पर गुरु जी ने रावी नदी, जो लाहौर शहर की दीवारों का छूकर बह रही थी, में स्नान करने के लिए कहा। चंदू बड़ा खुश हुआ कि इस तरह गुरु जी का शरीर छालों से भरा होने के कारण ठंडे पानी में नहाने से और अधिक पीड़ित होगा। सो, उसने गुरु जी को नदी में स्नान करने के लिए सहमति दे दी। गुरु जी के साथ सिपाही भेजे गये। गुरु जी के सिखों ने उनकी ओर देखा। गुरु जी ने उनकी ओर देखा और अभी भी कुछ करने से मना कर दिया। गुरु जी ने कहा, "यह मेरे अकाल पुरुख की रज़ा है। ईश्वरीय इच्छा के आगे सिर झुकाओ। अडिग रहो और सब क्लेशों के विरुद्ध शान्त रहो।"

एकत्र होकर सब लोगों ने गुरु जी को पानी में खड़े और डुबकी लगाते हुए देखा। **देखते ही देखते ज्योति परम ज्योति में समा गई और गुरु जी का शरीर कहीं न मिला। सतिगुरु जी धन्य हो! आप सर्वोत्तम महान हो ! शक्तिमान पातशाह को प्रणाम !**

यह जेठ शुक्ल पक्ष चौथ का दिन था, सम्वत् 1663 (30 मई सन् 1606 ई.)।

1.गुरु साहिबान का इतना ऊँचा मान–सम्मान था कि धर्मी लोग कई बार सोचते कि उनका फर्ज है कि अपनी जानें, अपने परिवार और जायदाद गुरु जी को अर्पण कर दें। कई सिख अपनी पुत्रियों के जन्म के समय ही प्रण कर लेते कि इन्हें गुरु जी या गुरु जी के संबंधियों को ही अर्पण करना है। वे इनका विवाह किसी और से नहीं करते थे। सो, गुरु जी सिखों की इच्छाओं और प्रतिज्ञाओं को पूरा करने के लिए स्वयं को मजबूर समझते थे।

2. गुरु जी की पदवी सदा सबसे ऊँची है, पर वह संगत को मान बख़्शते थे। कहा जाता है कि गुरु बीस बिसवे और संगत इक्कीस बिसवे। चंदू का नाता संगत ने अस्वीकार किया था। सो, संगत के फैसले को स्वीकार करने के लिए गुरु जी विवश थे।

3. जैसा कि हम आगे देखेंगे, जहाँगीर ने लिखा कि गुरु जी ने खुसरों के माथे पर केसर का तिलक लगाया था, जिसका अर्थ था कि गुरु जी ने खुसरों को बादशाही की बख़्शीश दी थी। यह सच नहीं था। ऐसा लगता है कि गुरु जी के दुश्मनों ने एक झूठी कहानी बनाई, जहाँगीर को गुरु जी के खिलाफ करने के लिए।